DOI: 10.51220/hjssh.v6i1.10

Himalayan J. Soc.Sci. & Humanities Vol- 6 pp.75 - 79 , December, 2011, ISSN. 0975 - 9891

छायावादी कविता में नवगीत

राखी उपाध्याय

हिन्दी विभाग, डी0ए0वी0 (पी0जी0) कॉलेज, देहरादून

ई-मेल drrakhi_418@rediffmail.com

Received: 22-07-2011 **Revised:13-9-2011** **Accepted: 29-10-2011**

ABSTRACT

छायावादी कवियों ने गीत को व्यक्तिगत सीमा में ही तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का शब्द रूप स्वीकार किया, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सकता था। उन्होने सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था विशेष का गिने-चुने शब्दों में स्वर साधना के द्वारा उपर्युक्त चित्रण कर देने को 'गीत' की संज्ञा दी। गीत को अपने आप में परिपूर्ण माना जाता रहा है। यह स्वीकार किया गया कि "गीत की सबसे बड़ी खूबी है कि वह अपने आप में परिपूर्ण है।" गीत वह है जिसमें भाव विचार अनुभूति कल्पना-एक शब्द में कथ्य की एकता है। आधुनिक युग में इस गीत शब्द ने शाब्दिक तथा आर्थिक दोनों ही प्रकार से अनेक रूप धारण किये है-"गीत" शब्द का न केवल अर्थ और प्रभाव की दृष्टि से विकास हुआ है वरन् रूपात्मक दृष्टि से भी वह उतना ही विकसित हुआ है। गीत से गीति-गीत काव्य अथवा गीति काव्य, प्रगीति अथवा प्रगीति काव्य, प्रगीत मुक्तक जैसे शब्दो का निर्माण हुआ है। "काव्य अपनी आरम्भिक अवस्था में गीत ही था। आरम्भ से लेकर आज तक इस गीत अथवा गीत काव्य की महत्ता संक्षेपीकरण में रखी है। सामान्यत: कवि की वैयक्तिक भाव धारा और अनुभूति को उसके अनुरूप लयात्मक अभिव्यक्ति देने के विधान को गीति काव्य कहते हैं।

Keywords-गीत शब्द का अर्थ तथा प्रयोग, छायावादी काव्य

परिचय

गीत तथा गीति शब्द दोनों का ही प्रयोग नया नहीं है-इसका प्रयोग अत्यन्त प्राचीन काल से होता आ रहा है। प्राचीन शास्त्रीय चिन्तन के बाद हिन्दी में काव्य रूपों को लेकर आधुनिक युग से पहले गम्भीर चिन्तन बहुत कम हुआ है। आधुनिक युग में छायावादी कवियों ने अपनी रचनाओं के प्रति द्विवेदी युगीन आचार्यों का जो मत था वह अच्छा नहीं था और उनके विषय में अनेकानेक भ्रम भी प्रचलित किए जा रहे थे। इसके साथ ही आधुनिक युग प्राचीनता से बहुत आगे बढ़ चुका था।

छायावादी कवियों ने गीत को व्यक्तिगत सीमा में ही तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का शब्द रूप स्वीकार किया, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सकता था। उन्होंने सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था विशेष का गिने-चुने शब्दों में स्वर साधना के द्वारा उपयुक्त चित्रण कर देने को 'गीत' की संज्ञा दी। वैशिष्ट्य के रूप में यह स्वीकार किया गया कि इसका महात्मय गायक के आलाप के साथ ही स्पष्ट हो जाता है। महादेवी वर्मा ने गीतों की रचना के साथ ही इस पर विचार भी प्रस्तुत किया। समालोचना संबंधी निबन्धों

©SHARAD

के माध्यम से उन्होंने कुल मिलाकर जिस बात पर बल दिया वह भाव की तीव्रता की थी। यह भाव तीव्रता भी दूसरों के उल्लास विलास के साथ तादात्म्य स्थापित करने से ही प्राप्त हो सकती है-ऐसा माना गया।

कालान्तर में गीतों की अन्विति को विशेष महत्व दिया गया। कहा गया है कि "गीतों की अपनी एक इकाई होती है। भावों-विचारों की ओर एक हद तक अभिव्यक्ति के उपकरणों की भी-उनका आनन्द लेने के लिए किसी टीका टिप्पणी की आवश्यकता नहीं होती।"[1]

गीत को अपने आप में परिपूर्ण माना जाता रहा है। यह स्वीकार किया गया कि "गीत की सबसे बड़ी खूबी है कि वह अपने आप में परिपूर्ण है। इसके लिए सन्दर्भ या प्रसंग की आवश्यकता नही है।"[2]

इस प्रकार गीत में भाव विचार, अनुभूति और कल्पना को एक साथ इस रूप में अभिव्यक्त करने में बात कही गयी है कि उसका प्रभाव भी एक साथ वैसा ही पड़ सके।" गीत वह है जिसमें भाव विचार अनुभूति कल्पना-एक शब्द में कथ्य की एकता है और उसका एक ही प्रभाव पड़े।"[3]

गीत शब्द को परिभाषित करने से पूर्व कुछ प्रमुख तत्वों को ध्यान में रखा गया-उदाहरणार्थ "गीत" शब्द का प्रयोग ऐसी रचनाओं के लिए हुआ जिनमें अनुभूति के धरातल पर अभिव्यक्ति का स्वर इस प्रकार अनुभूत हुआ कि-अभिव्यंजना के उस क्षण विशेष में कवि स्वयं केन्द्र में विद्यमान था। कवि जो कुछ कहना चाह रहा था वह सब अपने पर बीता हुआ यथार्थ था। उसमें उसके 'स्व' की पुकार थी। उसमें गेयात्मकता थी, लयात्मकता और सगात्मकता स्वाभाविक रूप से प्रकट हुई थी। यह अभिव्यक्ति प्राय: भावात्मक स्तर पर थी, भले ही वह भावात्मकता कभी रागमय थी तो कभी विरागमय-कभी आह्लाद पूर्ण थी तो कभी करूणा विगलित। सामान्यत: इसी मूल भावना को लेकर साहित्य में बहुविध गीतों और गीतात्मक रचनाओं का विकास हुआ।

आधुनिक युग में इस गीत शब्द ने शाब्दिक तथा आर्थिक दोनों ही प्रकार से अनेक रूप धारण किया है-गीत शब्द का न केवल अर्थ और प्रभाव की दृष्टि से विकास हुआ है वरन् रूपात्मक दृष्टि से भी वह उतना ही विकसित हुआ है गीत से गीति-गीत काव्य अथवा गीति काव्य, प्रगीति अथवा प्रगीति काव्य, प्रगीत मुक्तक जैसे शब्दों का निर्माण हुआ है। ये शब्द अपनी अर्थवत्ता में गीत की मूल भावना को छिपाए हुए भी अर्थ की दृष्टि से दिशा वैविध्य को प्राप्त होते रहे हैं। सम्प्रति गीति काव्य अथवा प्रगीति काव्य जैसे शब्दों का प्रयोग अधिकांशत: होने लगा है। जिसका सम्बन्ध भी अन्य भाषाओं की समकक्षता में देखा जाने लगा है। कुछ लोगों ने गीत और प्रगीत जैसे शब्दों में विभेद प्रकट करने की चेष्टा की है। किन्तु व्यावहारिक रूप में इन शब्दों का प्रयोग करते समय वे स्वत: न तो सजग हैं और न ही स्पष्ट भी। इसलिए गीत काव्य में स्वरूप और उसके विकास को स्पष्ट करने के लिए गीत की मूल भावना को समझना आवश्यक है। 'गीति काव्य' के विकसित अर्थ पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि 'ग्रीस' में ईसा से पांचवी शती पूर्व गेय रचनाओं के लिए (Lyric) शब्द का प्रयोग किया जाता था। गेय रचना 'लायर' नामक वाद्य यन्त्र के सहारे गाई जाती थी।"[4]

आरम्भिक गेय कविताऐं राजनीति परक थी।........'लिरिक कविता ने ग्रीस में बराबर अपना गेय रूप कायम रखा। उसकी भाषा सरल और सुगम थी-आम लोगों की दी उसका छन्द और उसकी शब्द रचना सभी

सहज थे। उसमें साधारण जनों के हर्ष, विषाद, संयोग, वियोग, प्रणय, क्रोध आदि वर्णित होते थे। सर्वथा निजी :i lsx$rkmldkvk';d xqkFkk**[5]

"गीतिकाव्य" शब्द साधारणतया तो उस समूची काव्य रचना के लिए व्यवहृत होता था जो वाद्य यन्त्रों (Lyric) के सहारे गाई जाती थीं-फिर भी हीगल आदि अधिकांश पाश्चात्य चिन्तक उसे एक ऐसी व्यक्ति सापेक्ष्य रचना के रूप में स्वीकार करते रहे जिसमें भावना के सहसा उद्रेक के साथ तीर की-स्वानुभूति की गहराई, हृदय संवेगों का सहज स्वाभाविक उच्छलन एवं संगीत चेतना समाहित थी।"[6]

हिन्दी में गीति काव्य 'लिरिक' के तत्त्व बोध के लिए निर्मित आधुनिक शब्द है जिसका मूलभूत आधार गीत अथवा गीतकाव्य है। गीत का प्रयोग प्राचीनतम है और नाट्यशास्त्र में इसके प्रयोग मिलते हैं-. ....गीतिकाव्य पश्चिम से आया हुआ विधान है जिसकी वहां संज्ञा थी लिरिक (Lyric) । 'लिरिक' के अर्थ विकास का इतिहास गीतिकाव्य के तात्विक विवेचन के लिए आवश्यक होगा।"[7]

"काव्य अपनी आरम्भिक अवस्था मे गीत ही था। आरम्भ से लेकर आज तक इस गीत अथवा गीति काव्य की महत्ता उसके संक्षेपीकरण में रखी है। सामान्यत: कवि की वैयक्तिक भाव धारा और अनुभूति को उसके अनुरूप लयात्मक अभिव्यक्ति देने के विधान को गीति काव्य कहते हैं। वह उन पूर्ण और समग्र क्षणों की वाणी है जिनकी स्थिति में वे क्षण ही पूर्ण और समग्र जीवन प्रतीत होते हैं-......कला की कृत्रिमता भी इतनी सहज और नैसर्गिक रहती है कि उसमें सहजता का ही बोध संभव होता है।"[8]

गीतिकाव्य को रचना के व्यापक परिवेश में देखना ही उपयुक्त होगा। केवल गेयता से युक्त गीतों को गीतिकाव्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती बल्कि इस प्रकार के गीतों को गीति काव्य के एक भेद के रूप में ही देखा जा सकता है।

जहां तक गीतिकाव्य की वैयक्तिक आत्माभिव्यक्ति का प्रश्न है निश्चय ही इस वैयक्तिकता के मानदण्ड भी बदल गए हैं यह वैयक्तिकता कवि के आत्मपरिवेश के विस्तार के साथ ही साथ विस्तृत होती गई और उसमें समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग समहित होता गया है। इसीलिए वैयक्तिकता और आत्मपरकता के घेरे में निराला की अधिसंख्य रचनाओं से लेकर आज तक के प्रगतिवादी जनवादी काव्य को अलग नहीं किया जा सकता।

निरालान ने इस रचना विधा में कवित्व और संगीत की समरूप योजना पर बल देते हुए कहा "प्राचीन गवैयों की शब्दावली, संगीत की संगति की रक्षा के लिए, किसी तरह जोड़ दी जाती थी, इसीलिए उसमें काव्य का एकान्त अभाव रहता था। आज तक उनका यह दोष प्रदर्शित होता है। मैने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर में भी मुखर करने की कोशिश की है। ह्रस्व-दीर्घ की घट-बढ़ के कारण पूर्ववर्ती गवैये शब्दाकारों पर जो लांछन लगता है, उससे भी बचने का प्रयत्न किया है। दो-एक स्थलों को छोड़कर अन्यत्र सभी जगह संगीत के छन्द: शास्त्र की अनुवर्तिता की है। भाव प्राचीन होने पर भी प्रकाशन का नवीन ढंग लिए हुए है। जो संगीत कोमल, मधुर और उच्च भावप तद्नुकूल भाषा और प्रकाशन से व्यक्त होता है, उसके

साफल्य की मैने कोशिश की है।''[9]

निराला के द्वारा प्रस्तुत गीति काव्यांगों में से मौलिकता और भावानुकूल भाषा तो काव्य-मात्र के लिए वांछित है, किन्तु काव्य-शोभा की योजना के लिए संगीत का उपयुक्त आश्रय लेना उसकी अपनी विशेषता है।

गीति कवियों में महादेवी वर्मा का स्थान 'निराला' के पश्चात ही आता है। पंत जी ने 'गीत-गद्य' के नाम से एक नवीन काव्य विधा का उद्‌भाव किया। महादेवी वर्मा ने काव्य रचना के रूपों में से गीतिकाव्य के स्वरूप का समृद्ध विवेचन किया।' सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था-विशेष का गिने चुने शब्दों में स्वर-साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।''

''गेयता में ज्ञान का क्या स्थान है यह भी प्रश्न है। बुद्धि के तर्क-क्रम से जिस ज्ञान की उपलब्धि हो सकती है उसका भार गीत नहीं संभाल सकता, पर तर्क से परे इन्द्रियों की सहायता के बिना ही हमारी आत्मा अनायास ही जिस सत्य का ज्ञान प्राप्त कर लेती है उसकी अभिव्यक्ति में गेय स्वर-सामंजस्य का विशेष महत्व रहा है।''[10]

गीतिकाव्य में तीन गुणों की स्थिति होनी आवश्यक है-(1)आत्माभिव्यक्ति अर्थात् वैयक्तिक सुख-दुख का कथन (2) बौद्धिक तर्क क्रम के स्थान पर अनुभूति से प्राप्त ज्ञान (3) गेयता अथवा स्वरों का आरोह-अवरोह क्रम।

गीतिकाव्य के अन्य प्रकारों में महादेवी वर्मा ने लोकगीत के स्वरूप की भी व्याख्या की है। उन्होने रहस्यगीत (सुगणोन्मय गीत तथा निर्गुण गीत) के साथ-राष्ट्रगीत का भी उल्लेख किया है। रहस्यगीत की प्रवृत्तियों की व्याख्या करते हुए वह कहती है ''रहस्यगीतों का मूलाधार भी आत्मानुभूत अखण्ड चेतन है तथा रहस्य गीतों मे आनन्द की अभिव्यक्ति के सहारे ही हम चित् और सत् तक पहुंचते हैं।''[11]

इसी परम्परा में रामकुमार वर्मा ने भी गीतिकाव्य के स्वरूप की समीक्षा की है। ''प्रसाद जी का आँसू शीर्षक लेख में प्रगीतात्मक रचना की विशेषताओं के विषय में कहते हैं'' आँसू एक उच्च कोटि का गीतिकाव्य है इसमें भावना की एकरूपता, अनुभूति की तीव्रता तथा मधुरसंगीत आदि-गीतिकाव्य के अनेक गुण पाये जाते हैं।''[12]

गीत की सफल रचना के लिए कवि को इन तीनों गुणों पर समान रूप से ध्यान देना होता है और इनमें से अनुभूति प्रबलता को गीत का मूल हेतु माना जा सकता है। संगीत की मधुर स्वर-लहरी के माध्यम से भावना की अभिव्यक्त अनुभूति का स्वाभाविक फल है।

प्रगीतकार 'बच्चन' ने गीत के स्वरूप को इन शब्दों में प्रकट किया ''प्रत्येक गीत को सर्व स्वतन्त्र अपराश्रित और अपने में ही परिपूर्ण मानकर पढ़ा या गाया जाता है और उसका रस लिया जाता है। अब यह गीतकार का काम है कि गीतों की परिमित परिधि के भीतर ही भावों का उद्रेक और विकास कर उन्हें वांछित परिणति तक पहुंचा दे।''[13] इस उक्ति में गीतिकाव्य के दो गुणों को स्पष्ट किया गया पहला उसमें किसी एक ही भाव को स्वतन्त्र और परिपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है, और दूसरे उसके अध्ययन से भावक को रस

अथवा आनन्द की उपलब्धि होती है। वस्तुतः ये दोनों गुण नवीन नहीं है वरन् कवियों की परम्परा में इनमें से पहले गुण का निर्दोष सर्वप्रथम हरिवंश राय बच्चन ने ही किया है। 'बच्चन' की प्रतिभा मूलतः गीतात्मक है। गीतिकाव्य के लेखकों में जो सुबोधता उनकी रचनाओं में पायी जाती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। प्रतीक विधान उनकी रचनाओं में हिन्दी के बहुत से कवियों की अपेक्षा अधिक सरस, सहज और सफल है। हिन्दी के छन्दों के अतिरिक्त उर्दू के बहुत से गीतों में ध्वनि का सौन्दर्य तो नही, पर एक प्रकार की गूंज की मधुरता है, जो अंतःकरण में देर तक मंडराती रहती है।

उत्तार छायावाद काल के कवियों में नरेन्द्र शर्मा की ख्याति प्रवासी के गीत के प्रकाशन के साथ आरंभ होती है इस कृति ने एक सफल गीतकार के रूप में उन्हें सदैव के लिए प्रतिष्ठित कर दिया।

आलोच्य कवियों ने गीतिकाव्य के स्वरूप की विविध व्याख्या तो की परन्तु उनकी धारणाओं का विश्लेषण करने पर भी गीत की परिभाषा पूर्ण नहीं हो सकती है क्योंकि गीत केवल वह रचना नहीं है जिसमें भाव-विशेष की स्वतन्त्र परिपूर्ण, लयबद्ध तथा आनन्दात्मक अभिव्यक्ति हो-उसमें आत्माभिव्यक्ति आदि अन्य तत्वों का भी महत्वपूर्ण योग रहता है।

आभार अभिव्यक्ति

मैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने इस शोध-पत्र को तैयार करने में वित्तीय सहयोग किया।

सन्दर्भ

1. 'आरती और अंगारे' डॉ0 हरिवंश राय बच्चन, पृष्ठ-11
2. 'प्रणय पत्रिका' भूमिका भाग, डॉ0 हरिवंश राय बच्चन
3. त्रिभंगिमा-प्राक्कथन, डॉ0 हरिवंश राय बच्चन
4. विश्व साहित्य की रूप रेखा, डॉ0 भगवत शरण उपाध्याय, पृष्ठ-195-196
5. विश्व साहित्य की रूप रेखा, डॉ0 भगवत शरण उपाध्याय, पृष्ठ-195-196
6. हिन्दी साहित्य कोश, डॉ0 ब्रजेश्वर वर्मा
7. हिन्दी साहित्य कोश, गीतिकाव्य, रामखेलावन पांडे, पृष्ठ-261
8. हिन्दी साहित्य कोश, गीतिकाव्य, रामखेलावन पांडे, भाग प्रथम, पृष्ठ-262-264
9. गीतिका, भूमिका, पृष्ठ-6
10. महादेवी का विवेचनात्मक गद्य, पृष्ठ-145
11. महादेवी का विवेचनात्मक गद्य, पृष्ठ-146
12. विचार दर्शन, पृष्ठ-57
13. 'आरती और अंगारे' भूमिका, पृष्ठ-11